जलवायु परिवर्तन:

HI-LIGHTS :- स्टोकहोम से पेरिस तक का सफ़र, भारत के महत्वपूर्ण पहल एवं COP 21 का भारत पर प्रभाव



A.परिचय

B. जलवायु परिवर्तन के कारण

I. प्राकृतिक कारण

Ii. मानवीय कारण

ग्रीन हाउस गैसों की भूमिका

C. जलवायु परिवर्तन के प्रभाव:

D. जलवायु परिवर्तन के बचाव के उपाए:

- अन्तराष्ट्रीय प्रयास

> स्टॉकहोम सम्मेलन 1972

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम(UNEP)

> नैरोबी सम्मेलन, 1982

पर्यावरण तथा विकास पर विश्व आयोग की स्थापना

> मॉण्ट्रियल-ओजोन परत संरक्षण संधि, 1987

पर्यावरण और विकास पर रियो घोषणापत्र

जलवायु परिवर्तन पर रूपरेखा संबंधी अनुबंध

जैव विविधता पर अनुबंध

कार्यसूची - 21

> सतत विकास पर जोहान्सबर्ग सम्मेलन

> लोबल वार्मिंग पर क्योटो सम्मेलन, 1997

> जलवायु परिवर्तन पर बाली सम्मेलन

> कोपेनहेगेन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन 2009

F. संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, COP 21 या CMP 11--पेरिस

> पेरिस पर वैश्विक नजरिया

G. जलवायु परिवर्तन और राष्ट्रीय मिशन

H. "पेरिस जलवायु समझौता और भारत

I. निष्कर्ष

परिचय

सामान्य शब्दों में जलवायु परिवर्तन, औसत मौसमी दशाओं के पैटर्न में ऐतिहासिक रूप से बदलाव आने को कहते हैं।लेकिन पिछले कुछ वर्षों में यह बदलाव अचानक तेज़ी से हो रहा है.जिससे एक ओर गर्मियां लंबी होती जा रही हैं, तो वही सर्दियां छोटी. और यह बदलाव कमोवेश पूरी दुनिया में हो रहा है.और इस क्रम में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह बदलाव मानवीय कार्यकलापों की वजह से ज्यादा हो रहा है|

उन्नीसवीं सदी के तापमान के आंकड़े बताते हैं कि पिछले 100 साल में पृथ्वी का औसत तापमान 0.8 डिग्री सेल्सियस बढ़ा. इस तापमान का 0.6 डिग्री सेल्सियस तो पिछले तीन दशकों में ही बढ़ा है.

मानव सभ्यता के 10 हजार सालों में इतनी तपन कभी नहीं बढ़ी जो 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक और 21वीं शताब्दी के प्रथम दशक में महसूस की गई। तापमान बढ़ने से ग्लेशियर पिघल रहे हैं। समुद्री जल स्तर बढ़ रहा है। हाल ही में अमेरिका में सहस्त्राब्दी परितंत्र मूल्यांकन (मिलेनियम इकोसिस्टम इवैल्यूएशन) के निदेशक मंडल की ओर से वक्तव्य जी किया गया है कि इस पृथ्वी के क्रियाकलापों में मानव की बढ़ती दखलंदाजी से अब यह दावा नहीं किया जा सकता है कि भावी पीढ़ी के लिए भी पृथ्वी की यही क्षमता कायम रह सकेगी।

जलवायु परिवर्तन के कारण

मुख्य रूप से, सूर्य से प्राप्त ऊर्जा तथा उसका हास् के बीच का संतुलन ही हमारे पृथ्वी की जलवायु का निर्धारण और तापमान संतुलन निर्धारित करती हैं। यह ऊर्जा हवाओं, समुद्र धाराओं, और अन्य तंत्र द्वारा विश्व भर में वितरित हो जाती हैं तथा अलग-अलग क्षेत्रों की जलवायु को प्रभावित करती है।

कारक जो जलवायु में परिवर्तन के जिम्मेदार होते हैं जिनमे सौर विकिरण में बदलाव, पृथ्वी की कक्षा में बदलाव, महाद्वीपों की परावर्तकता में बदलाव, वातावरण, महासागरों, पर्वत निर्माण और महाद्वीपीय बहाव तथा ग्रीनहाउस गैस की सांद्रता में परिवर्तन आदि शामिल हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारणों को दो बागों में बांटा जा सकता है- प्राकृतिक व मानव निर्मित



I. प्राकृतिक कारण

जलवायु परिवर्तन के लिये अनेक प्राकृतिक कारण जिम्मेदार हैं। इनमें से

प्रमुख हैं- महाद्वीपों का खिसकना, ज्वालामुखी, समुद्री तरंगें आदि।

- **महाद्वीपों का खिसकना-**

हम आज जिन महाद्वीपों को देख रहे हैं, वे इस धरा की उत्पत्ति के साथ ही बने थे तथा इनपर समुद्र में तैरते रहने के कारण तथा वायु के प्रवाह के कारण इनका खिसकना निरंतर जारी है। इस प्रकार की हलचल से समुद्र में तरंगें व वायु प्रवाह उत्पन्न होता है। इस प्रकार के बदलावों से जलवायु में परिवर्तन होते हैं। इस प्रकार से महाद्वीपों का खिसकना आज भी जारी है।

- **ज्वालामुखी**

जब भी कोई ज्वालामुखी फूटता है, वह काफी मात्रा में सल्फरडाई ऑक्साइड, पानी, धूलकण और राख के कणों का वातावरण में उत्सर्जन करता है। भले ही ज्वालामुखी थोड़े दिनों तक ही काम करें लेकिन इस दौरान काफी ज्यादा मात्रा में निकली हुई गैसें, जलवायु को लंबे समय तक प्रभावित कर सकती है। गैस व धूल कण सूर्य की किरणों का मार्ग अवरूद्ध कर देते हैं, फलस्वरूप वातावरण का तापमान कम हो जाता है।

- **समुद्री तरंगें**

समुद्र, जलवायु का एक प्रमुख भाग है। वे पृथ्वी के 71 प्रतिशत भाग पर फैले हुए हैं। समुद्र द्वारा पृथ्वी की सतह की अपेक्षा दुगुनी दर से सूर्य की किरणों का अवशोषण किया जाता है। समुद्री तरंगों के माध्यम से संपूर्ण पृथ्वी पर काफी बड़ी मात्रा में ऊष्मा का प्रसार होता है



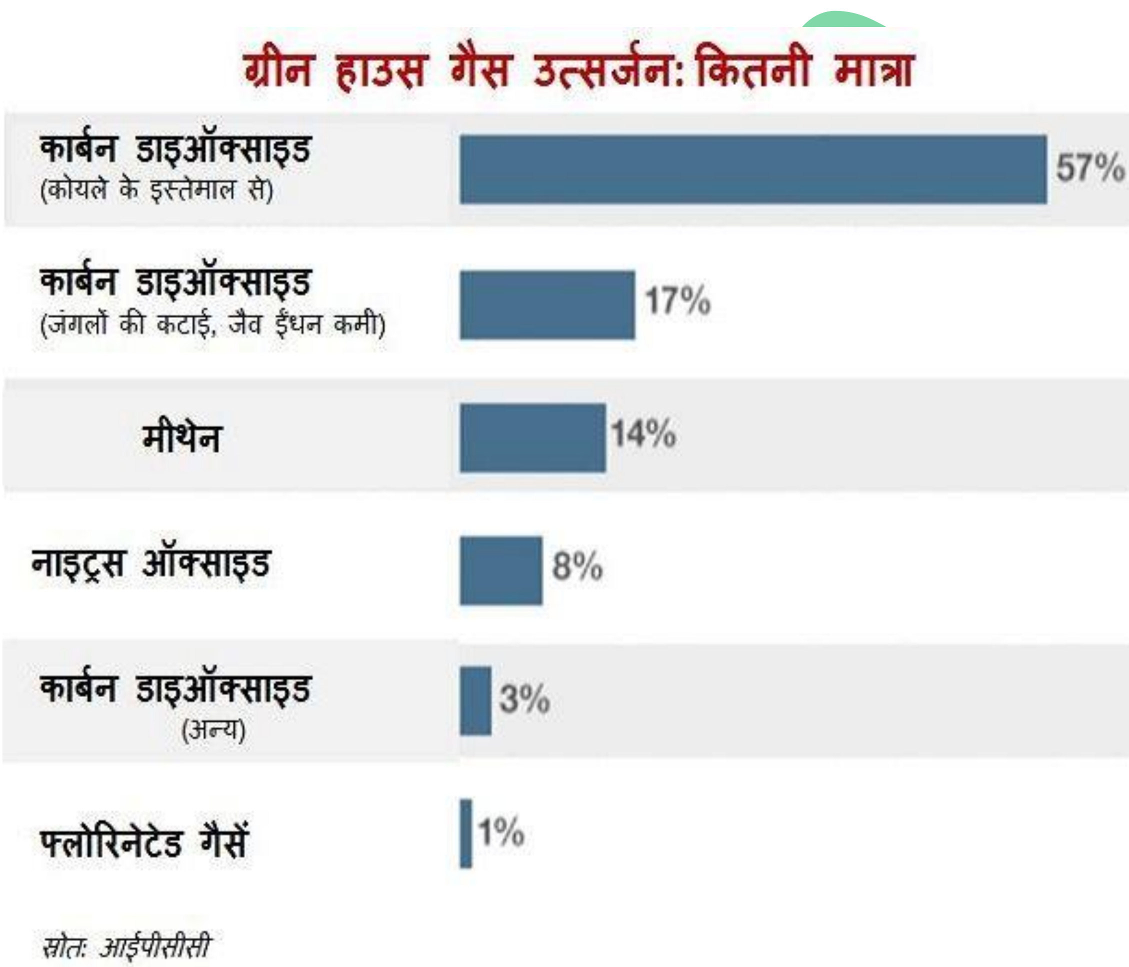
Ii. मानवीय कारण

ग्रीन हाउस गैसों की भूमिका

>.ग्रीन हाउस गैसों की परत पृथ्वी पर इसकी उत्पत्ति के समय से है। चूंकि अधिक मानवीय क्रिया-कलापों के कारण इस प्रकार की अधिकाधिक गैसें वातावरण में छोड़ी जा रही है जिससे ये परत मोटी होती जा रही है व प्राकृतिक ग्रीन हाउस का प्रभाव समाप्त हो रहा है।

> कार्बन डाईऑक्साइड तब बनती है जब हम किसी भी प्रकार का ईंधन जलाते हैं, जैसे- कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस आदि। इसके बाद हम वृक्षों को भी नष्ट कर रहे है, ऐसे में वृक्षों में संचित कार्बन डाईऑक्साइड भी वातावरण में जा मिलती है। खेती के कामों में वृद्धि, ज़मीन के उपयोग में विविधता व अन्य कई स्रोतों के कारण वातावरण में मिथेन और नाइट्रस ऑक्साइड गैस का स्राव भी अधिक मात्रा में होता है।

> औद्योगिक कारणों से भी नवीन ग्रीन हाउस प्रभाव की गैसें वातावरण में स्रावित हो रही है, जैसे क्लोरोफ्लोरोकार्बन, जबकि ऑटोमोबाईल से निकलने वाले धुंए के कारण ओज़ोन परत के निर्माण से संबद्ध गैसें निकलती है। इस प्रकार के परिवर्तनों से सामान्यतः वैश्विक तापन अथवा जलवायु में परिवर्तन जैसे परिणाम परिलक्षित होते हैं।



हम ग्रीन हाउस गैसों की वृद्धि में मानवीय योगदान:-

* कोयला, पेट्रोल आदि जीवाष्म ईंधन का उपयोग कर

* अधिक ज़मीन की चाहत में हम पेड़ों को काटकर

* अपघटित न हो सकने वाले समान अर्थात प्लास्टिक का अधिकाधिक उपयोग कर

* खेती में उर्वरक व कीटनाशकों का अधिकाधिक प्रयोग कर

1750 में औद्योगिक क्रांति के बाद कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर 30 प्रतिशत से अधिक बढ़ा है. मीथेन का स्तर 140 प्रतिशत से अधिक बढ़ा है.

ग्रीन हाउस प्रभाव

पृथ्वी द्वारा सूर्य से ऊर्जा ग्रहण की जाती है जिसके चलते धरती की सतह गर्म हो जाती है। जब ये ऊर्जा वातावरण से होकर गुज़रती है, तो कुछ मात्रा में, लगभग 30 प्रतिशत ऊर्जा वातावरण में ही रह जाती है। इस ऊर्जा का कुछ भाग धरती की सतह तथा समुद्र के ज़रिये परावर्तित होकर पुनः वातावरण में चला जाता है। वातावरण की कुछ गैसों द्वारा पूरी पृथ्वी पर एक परत सी बना ली जाती है व वे इस ऊर्जा का कुछ भाग भी सोख लेते हैं। इन गैसों में शामिल होती है कार्बन डाईऑक्साइड, मिथेन, नाइट्रस ऑक्साइड व जल कण, जो वातावरण के 1 प्रतिशत से भी कम भाग में होते है। इन गैसों को ग्रीन हाउस गैसें भी कहते हैं। जिस प्रकार से हरे रंग का कांच ऊष्मा को अन्दर आने से रोकता है, कुछ इसी प्रकार से ये गैसें, पृथ्वी के ऊपर एक परत बनाकर अधिक ऊष्मा से इसकी रक्षा करती है। इसी कारण इसे ग्रीन हाउस प्रभाव कहा जाता है।

ग्रीन हाउस प्रभाव को सबसे पहले फ्रांस के वैज्ञानिक जीन बैप्टिस्ट फुरियर ने पहचाना था। इन्होंने ग्रीन हाउस व वातावरण में होने वाले समान कार्य के मध्य संबंध को दर्शाया था।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव:



यह कोई नहीं जानता कि गर्मी की कितनी मात्रा 'सुरक्षित' है। पर हमें ये जरूर पता है कि जलवायु परिवर्तन लोगों एवं पारिस्थितिक तंत्र को पहले से ही नुकसान पहुंचा रहा है । इसकी सच्चाई ग्लेशियरों के पिघलने, ध्रुवीय बर्फ के खंडित होने, परिहिमन क्षेत्र के विगलन, मानसून के तरीके में परिवर्तन, समुद्र के बढ़ते जल स्तर, बदलते पारिस्थितिक तंत्र एवं घातक गर्म तरंगों में देखी जा सकती है। इस प्रकार इसके कुछ प्रभावों को निम्न रूपों में देख सकते है:

(क) मौसम



जलवायु परिवर्तन की वजह से मौसम की निरंतरता में बदलाव आया है| गर्म मौसम होने से वर्षा का चक्र प्रभावित होता है, इससे बाढ़ या सूखे का खतरा भी हो सकता है, ध्रुवीय ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र के स्तर में वृद्धि की भी आशंका हो सकती है। पिछले वर्ष के तूफानों व बवंडरों की आवृति में व्यापक वृद्धि ने अप्रत्यक्ष रूप से इसके संकेत दे दिये है।

(ख) खेती



बढ़ती जनसंख्या के कारण भोजन की मांग में भी वृद्धि हुई है। इससे प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बनता है। जलवायु में परिवर्तन का सीधा प्रभाव खेती पर पडेग़ा क्योंकि तापमान, वर्षा आदि में बदलाव आने से मिट्टी की

क्षमता, कीटाणु और फैलने वाली बीमारियां अपने सामान्य तरीके से अलग प्रसारित होंगी। यह भी कहा जा रहा है कि भारत में दलहन का उत्पादन कम हो रहा है। अति जलवायु परिवर्तन जैसे तापमान में वृद्धि के परिमाणस्वरूप आने वाले बाढ़ आदि से खेती का नुकसान बढ़ेगा।

यही नही इससे मानसून का चक्र बिगड़ रहा है. जिससे परंपरागत रूप से उत्पादित होती आ रहीं बड़ी संख्या में फसलों का नामो-निशान तक मिट गया है. कम पानी और रासायनिक खादों के बिना पैदा होने वाली कई फसलें समाप्त हो चुकी हैं और उसकी जगह नई फसलों ने ले लिया है.

इनमें बड़ी मात्रा में रासायनिक खादों, कीटनाशकों, परिमाजिर्त बीजों और सिंचाई की जरूरत पड़ती है. इससे खेती का खर्च बढ़ा है और खेती के तरीके मे बदलाव आया है. इसका सीधा असर ग्रामीण कृषक समाज के जीवन स्तर और रहन-सहन पर पड़ रहा है. खेती घाटे का सौदा बनने के चलते किसान अन्य धंधों की ओर जाने को विवश हुआ है. खेती में उपज तो बढ़ी लेकिन लागत कई गुना अधिक हो गई, जिससे अधिशेष यानी, मार्जिन का संकट पैदा हो गया.



(ग) समुद्र के जल-स्तर में वृद्धि

जलवायु परिवर्तन का एक और प्रमुख कारक है समुद्र के जल-स्तर में वृद्धि। समुद्र के गर्म होने, ग्लेशियरों के पिघलने से यह अनुमान लगाया जा रहा है कि आने वाली आधी सदी के भीतर समुद्र के जल-स्तर में लगभग आधे मीटर की वृद्धि होगी। समुद्र के स्तर में वृद्धि होने के अनेकानेक दुष्परिणाम सामने आएंगे जैसे तटीय क्षेत्रों की बर्बादी, ज़मीन का पानी में जाना, बाढ़, मिट्टी का अपरदन, खारे पानी के दुष्परिणाम आदि। इससे तटीय जीवन अस्त-व्यस्त हो जाएगा, खेती, पेय जल, मत्स्य पालन व मानव बसाव तहस नहस हो जाएगी।सबसे बड़ा प्रभाव उन गरीब देशों पर होगा जो समुद्र के बढ़ते जल स्तर से अपने को सुरक्षित रखने में अल्प सक्षम हैं।



(घ) स्वास्थ्य

वैश्विक ताप का मानवीय स्वास्थ्य पर भी सीधा असर होगा, इससे गर्मी से संबंधित बीमारियां, निर्जलीकरण, संक्रामक बीमारियों का प्रसार, कुपोषण और मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव होगा।एशिया, अफ्रीका एवं प्रशांत क्षेत्र के विकासशील देशों में बीमारियों का प्रसार और भी बाधा है।

(ङ) जंगल और वन्य जीवन 

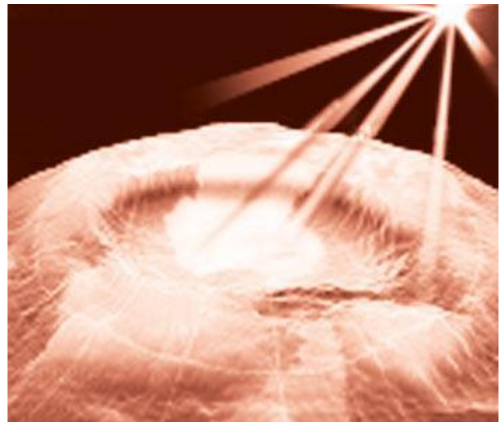
प्राणी व पशु, ये प्राकृतिक वातावरण में रहने वाले हैं व ये जलवायु परिवर्तन के प्रति काफी संवेदनशील होते हैं। यदि जलवायु में परिवर्तन का ये दौर इसी प्रकार से चलता रहा, तो कई जानवर व पौधे समाप्ति की कगार पर पहुंच जाएंगे।

(च) जैव विवधता का लोप 

जलवायु में परिवर्तन से पौधों एवं जीवों के प्राक्रतिक आवासों का ह्रास हो

रहा है जिससे अनेक देशी प्रजाति के पौधों एवं जीव या तो लुप्त होते जा रहे है या विलुप्त होने के कगार पर पहुँच चुके है|

(छ) ओजोन परत का क्षीण होना



सूर्य की घातक रेडियोधर्मी किरणों से पृथ्वी को बचाने वाली छतरी, ओजोन परत खतरनाक गैसों के कारण क्षतिग्रस्त होती जा रही है। ओजोन परत के कमजोर पडने का अर्थ है सूर्य के घातक विकिरण का पृथ्वी पर सीधे पहुंचना। परिणामस्वरूप सूर्य के संपर्क में आने वाले लोगों में ट्टवचा के कैंसर, मोतियाबि<द, और आँखों की बीमारियों समेत कमजोर प्रतिरक्षा तं9ा जैसी बीमारियों के मामलों में वृद्घि होगी। यही नहीं इसके दुष्प्रभाव से पेड-पौधे, जानवर और समुद्री जीव-जंतु भी अछूते नहीं बचेंगे।

जलवायु परिवर्तन के बचाव के उपाए:



हम सभी जानते हैं कि जलवायु परिवर्तन की समस्या कोई कोरी कल्पना नहीं बल्कि एक यथार्थ है।अतः इसका समाधान हम सब की जिम्मेदारी है इसके लिए कुछ निम्न बातें गौर करने लायक है।



* जीवाष्म ईंधन के उपयोग में कमी की जाए

* प्राकृतिक ऊर्जा के स्रोतों को अपनाया जाए, जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि

* पेड़ों को बचाया जाए व अधिक वृक्षारोपण किया जाए

* प्लास्टिक जैसे अपघटन में कठिन व असंभव पदार्थ का उपयोग न किया जाए

* प्रकृति उन्मुखी जीवनशैली को बढ़ावा दिया जाये

* औद्योगिकीकरण,नगरीकरण,तथा जनसँख्या वृद्धि को नियंत्रित किया जाये

उपर्युक्त कार्यों को धरातल पर लाने के राष्ट्रीय, अंतराष्ट्रीय तथा क्यक्तिगत सभी तरह के प्रयास आवश्यक हैं:

अन्तराष्ट्रीय प्रयास



सन् 1960 के दशक में मानव जाति पर्यावरण प्रदूषण के प्रति सजग हो गयी। यह माना गया कि आर्थिक विकास की दौड में पर्यावरण को बहुत हानि पहुँची है। यदि पर्यावरण प्रदूषण जारी रहा तो मानव अस्तित्व को ही खतरा है। अतः अब पर्यावरण संकट पर अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता महसुस की गई। इसी संदर्भ में 3 दिसंबर, 1968 को संयुक्त राष्ट्र संघ की आम सभा ने एक संकल्प पारित किया जिसमें मानव पर्यावरण पर एक अंतर्राष्टांीय सम्मेलन आयोजित करने का प्रस्ताव रखा। इस प्रकार 5 जून, 1972 को स्टॉकहोम में पहला विश्व पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया गया।

स्टॉकहोम सम्मेलन 1972

5 जून से 16 जून, 1972 तक स्वीडन के प्रमुख शहर स्टॉकहोम में मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन आयोजित किया गया। यह संयुक्त राष्ट्र द्वारा पर्यावरण संबधी चिनताओं पर चर्चा का पहला प्रयास था। पहली बार वायु-प्रदूषण और रसायनिक विषैलेपन जैसे मुद्दे विश्व स्तर पर चर्चा का विषय बने। इसमें अर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरण की सुरक्षा के लिए अंतर्राष्टा्रीय स्तर पर संगठित प्रयासों की शुरूआत की गई। इस सम्मेलन में 113 देशों ने भाग लिया। स्टॉकहोम सम्मेलन के परिणामस्वरूप एक 'स्टॉकहोम घोषण पत्र' जारी किया गया जिसमें मानव पर्यावरण की रक्षा के लिए 26 सिद्धांत और उनको क्रियान्वित करने के लिए 109 सुझाव शामिल किए गये।

घोषणा के मुख्य सिद्धांत निम्न हैं:-

मानव की यह जिम्मेदारी है कि वर्तमान के साथ-साथ आगे आने वाली पिढियों कि लिए पर्यावरण को सुरक्षित रखे।

* पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए उचित योजना तथा प्रबंध होना चाहिए।

* पृथ्वी की संसाधनों की पुर्ननिर्माण करने की शक्ति को अवश्य बनाए रखना चाहिए।

* खतरनाक रसायनिक पदार्थों तथा तत्त्वों के उट्टसर्जन पर रोक लगानी चाहिए जो पर्यावरण को हानि पहुँचाते हैं।

⁎ मानव रिहायश तथा शहरीकरण को पर्यावरण संरक्षण से जोडना चाहिए।

स्टॉकहोम सम्मेलन में 5 जून को 'विश्व पर्यावरण दिवस' के रूप में मनाने की भी घोषणा की गई । इसके अलावा एक अ<य प्रस्ताव भी पास किया गया जिसमें पर्यावरण के प्रति अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए संस्थागत और वित्तिय व्यवस्था का प्रावधान किया गया|

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम UNEP

स्टॉकहोम सम्मेलन के परिणामस्वरूप दिसंबर, 1972 को संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की स्थापना की गयी जिसका सचिवालय नैरोबी, किनिया में है। 58 सदस्यों वाली इस संख्या के सदस्य <यायोचित भौगालिक आधार पर तीन वर्ष की अवधि के लिए चुने जाते है। यह पर्यावरण रक्षा के क्षे9ा में संयुक्त राष्टा्र की मुख्य संस्था है। यह भूमण्डलीय पर्यावरण की स्थिति का आकलन करता है, अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण कानून के विकास को सुगम बनाता है। यह, बहुपक्षीय पर्यावरण समझौतों पर अंतर्राष्ट्रीय बातचीत को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

स्टॉकहोम सम्मेलन एक ऐसी घटना थी जिसने पर्यावरण को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक अहम मुद्दा बना दिया। इसने पर्यावरण की तरफ विकसीत तथा विकासशील देशों का ध्यान ही नहीं खिंचा बल्कि उनको एक मंच पर खडा

कर दिया। इसने स्वक्वछ पर्यावरण में रहने के अधिकार को एक महत्त्वपूर्ण अधिकार बना दिया। आज विश्व के 50 से अधिक देशों की सरकारों तथा अनेक संगठनों ने अपने संविधान में पर्यावरण को एक मौलिक अधिकार का दर्जा दिया हुआ है। स्टॉकहोम सम्मेलन के पश्चात राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कानूनों का निर्माण हुआ। अर्थिक सहयोग तथा विकास संगठन के देशों में 1971 से 1975 के मध्य 31 महत्त्वपूर्ण प्रदूषण नियं9ाण कानूनों का निर्माण किया गया। इस सम्मेलन के पश्चात पर्यावरण राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय ऐजेडे का एक अहम मुद्दा बन गया| यह स्टॉकहोम सम्मेलन की सफलता को दर्शाता है।

नैरोबी सम्मेलन, 1982

स्टॉकहोम सम्मेलन की दसवीं वर्षगाठ पर 105 राष्ट्र नैरोबी में 10 से 18 मई, 1982 को एकत्रित हुए और उन्होंने नैरोबी घोषणापत्र को स्वीकृति दी जिसमें 10 मुख्य घोषणाएं थी। घोषणापत्र में स्टॉकहोम सम्मेलन में घोषित पर्यावरण संबंधी वचनबद्धता को एक बार फिर दोहराया गया। पर्यावरण प्रदूषण के लिए गरीबी के साथ-साथ विलासिता पूर्ण जीवन को भी जिम्मेदार माना गया। इसके लिए एक नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की स्थापना पर जोर दिया गया।

यह माना गया कि पर्यावरणीय समस्याएँ राष्ट्रीय सीमाओं से परे हैं अत: इनका समाधान समय रहते अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से किया जाना चाहिए। पर्यावरण संरक्षण में विकसित देशों को विकासशील देशों को सहयोग देने की

बात की गई। नैरोबी घोषणापत्र द्वारा यह प्रस्ताव पारित किया गया कि वर्ष 2000 तक सतत विकास की प्राप्ति के लिए कौन से प्रयास किए जाएँगे तथा इसके लिए एक आयोग गठित करने की घोषणा भी की गई।

पर्यावरण तथा विकास पर विश्व आयोग की स्थापना

1983 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने नार्वे की प्रधानमंत्री ग्रो हारलम ब्रटलैण्ड की अध्यक्षता में पर्यावरण व विकास पर विश्व आयोग की स्थापना की। आयोग की रिपोर्ट 1987 में 'अवर कॉमन फ्यूचर' के नाम से प्रकाशित हुई। इसमें विकास को एक नई परिभाषा दी गई। विकास को पर्यावरण संरक्षक बनाने की बात कही गई। ब्रटलैंड रिपोर्ट में एक नये शब्द 'सतत विकास' का नामकरण हुआ।

इस रिपोर्ट ने सतत विकास की परिभाषा इस प्रकार की है: 'सतत विकास एक ऐसा विकास है तो भावी पीढियों की आवश्यकतओं की पूर्ति से समझौता किए बिना वर्तमान समय की आवश्यकताओं को पूरा करे'। इसमें इस बात पर जोर दिया गया कि विश्व के गरीब लोगों की आवश्यकताओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। साथ ही इसमें सीमितता का विचार भी दिया गया जिसका ताट्टपर्य था कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग एक सीमा तक ही किया जाना चाहिए ताकि उनसे वर्तमान के साथ-साथ भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति भी हो सके | यह भी कहा गया कि गरीबी से भरे संसार में स्वस्थ पर्यावरण संभव नहीं है क्योंकि गरीबी के कारण लोगों को पर्यावरण विनाशी क्रियायें करने के लिए मजबूर होना पडता है।

मॉण्ट्रियल-ओजोन परत संरक्षण संधि, 1987

ओजोन परत जो सूर्य की पाराबेंगनी किरणों से हमारी रक्षा करती है सन् 1985 में अंटार्कटिक के ऊपर 'ओजोन छिद्र' होने की पुष्टि हुई | ओजोन परत की रक्षा के लिए 1985 में वियना ओजोन परत संरक्षण समझौता हुआ। लेकिन इसके प्रावधानों को लागु करने के लिए कोई समय सिमा तय नहीं की जा सकी। इसी कडी में 16 सितम्बर, 1987 को मॉण्ट्रियल ओजोन परत संरक्षण संधि पर हस्ताक्षर किए गये जिसको 1 जनवरी, 1989 से लागु किया गया।

इस संधी का लक्ष्य मनुष्य द्वारा निर्मित उन पदार्थों को जो ओजान परत के लिए हानिकारक है कम करते हुए, उन्हें पूरी तरह समाप्त करना है। इस संधि में सदस्य देशों द्वारा उट्टसर्जन में कमी करने के दायित्वों का विस्तार से उल्लेख किया गया है। सदस्य देश उन पदार्थों के आयात पर प्रतिबंध लगाने के लिए भी सहमत हुए जो ओजान परत के लिए हानिकार हैं। इस संधी पर 48 देशों ने हस्ताक्षर किए। भारत तथा अन्यविकासशील देशों ने कुछ व्यवहारिक कारणों से इस संधी पर हस्तारक्षर नहीं किया है।

पर्यावरण और विकास पर रियो घोषणापत्र

ब्रण्डटलैण्ड आयोग की रिपोर्ट से प्रभावित होकर संयुक्त राष्ट्र संघ ने 3 जुन, 1992 में ब्राजील की राजधानी रियो डि जेनीरो में एक सम्मेलन हुआ जिसे 'पृथ्वी सम्मेलन' के नाम से भी जाना जाता है। इसमें 182 देशों के 20,000 से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। यह पर्यावरण संरक्षण पर अब तक का सबसे बडा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन था।

इसमें कहा गया कि दीर्घकालीन आर्थिक विकास तभी सुनिश्चित किया जा सकता है जब इसे पर्यावरण की सुरक्षा से जोडा जाए। इसके लिए इसमें सरकार के साथ-साथ वहाँ के लोगों तथा नागरिक समाज का भी शामिल होना जरूरी है। रियो सम्मेलन में निम्न दस्तावेज जारी किए गये:

जलवायु परिवर्तन पर रूपरेखा संबंधी अनुबंध

इस रूपरेखा में यह स्वीकार किया गया कि ग्रीन हाउस गैसों के कारण जलवायु परिवर्तन एक गंभीर समस्या है। इसलिए रियो सम्मेलन में इस समझौते पर 162 देशों ने हस्ताक्षर किए। इसका उद्देश्य एक ऐसा अन्तराष्ट्रीय ढांचा प्रदान करना था जिसके अंतर्गत ,लोबल वार्मिग के खतरे को कम करने के लिए भावी कदम उठाए जा सकें। इसमें इस तथ्य पर प्रकाश ढाला गया कि मानवीय क्रियायें जैसे जीवाश्म ईंधन को जलाना आदि पृथ्वी के वायुमंडल में बडी मात्रा में गैंसें छोड रही हैं। ये गैसे जिनमें कार्बन डाई-ऑक्साइड भी शामिल है, ग्रीन-हाउस प्रभाव में वृद्धि कर रही हैं

जलवायु परिर्वतन समझौते का मूल उद्देश्य पर्यावरण में ग्रीन हाउस गैसों

को एक स्तर पर स्थिर करना है । इसलिए समझौते में कहा गया है कि औद्योगिक देशों को अपने कार्बन डाइऑक्साइड उट्टसर्जन स्तर को सन 2000 तक सन 1990 स्तर पर ले जाना चाहिए। जलवायु परिवर्तन समझौता सभी राष्ट्रों को कुछ कार्यों के प्रति वचनबद्घ करता हैं, जिनमें मुख्य है:

> ग्रीनहाउस गैंसों के उट्टसर्जन की मात्रा की सूचना प्रदान करेंगे,

> ग्रीनहाउस गैंसों के उट्टर्सजन को नियंत्रित करने तथा जलवायु परिवर्तन के लिए अपनाए गए कार्यक्रमों की ताजा जानकारी नियमित रूप से प्रकाशित करेंगे,

> ग्रीनहाउस के कारण समाप्त होते हुए पौधों व वनों के संरक्षण के लिए स्वस्थ प्रबंध को बढावा देंगे,

जैव विविधता पर अनुबंध

जैवविविधता जीवमंडल पर जीवन की आधारभूत परिस्थितियों को बनाए रखने में महत्तवपूर्ण भूमिका अदा करती है। उपलब्ध सीमित संसाधनों पर जनसंख्या के बढते हुए दबाब ने जैव-विविधता को भीषण खतरा पहुँचाया है। जैव विविधता को बचाने के उद्देश्य से रियों सम्मेलन में 5 जून, 1992 को एक समझौता हुआ जिसे 29 दिसम्बर, 1993 को लागू किया गया। इसे 187 सदस्यों का समर्थन मिला। इस समझौते में यह प्रतिबद्घता सुनिश्चित की गई है कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया के कारण भूमंण्डलीय पारिस्थितिकी को क्षति न पहुँचे।

कार्यसूची - 21

कार्य सूची - 21, रियो सम्मलेन की सबसे बड़ी उपलब्धि था | यह सतत विकास की प्राप्ति के लिए एक भावी योजना के रूप में सामने आया जिसने विकास तथा पर्यावरण के मध्य सामंजस्य बनाने वाली नीति के रूप में कार्य किया। कार्यसूची -21 के मुख्य प्रावधान निम्न हैं:

> पर्यावरण तथा विकास के मध्य सामंजस्य बनाने के लिए सतत विकास पर राष्ट्रों के मध्य सहयोग विकसीत करना।

> विकासशील देशों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अन्तराष्ट्रीय नियमों तथा प्रावधानों को स्पष्टां करना।

> सतत विकास की प्राप्ति के लिए विकासशील देशों को तकनीकी सहयोग प्रदान करना।

> सतत विकास के संबंध में सभी राष्ट्रों के सहयोग से विधि-निर्माण हेतु संधियाँ करना।

> सतत विकास को राष्टांीय कार्यक्रमों के साथ जोडना तथा गैर-सरकारी संगठनों तथा आम जनता को शामिल करना।

रियो पृथ्वी सम्मेलन में भारत के प्रतिनिधि के रूप में पूर्व प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिंह राव ने कहा कि "पृथ्वी के संसाधनों में हाल के वर्षों में बहुत कमी आई है और संतुलन इतना गडबडा गया है कि इससे आने वाली पीढियों के

लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया है। अत: पर्यावरण के संरक्षण का दायिट्टव विकसित और विकासशील दोनों देशों का है।''

रियो सम्मेलन के केंद्रीय मुद्दों में जलवायु-परिवर्तन, जैव विविधता तथा वन्य-संरक्षण शामिल थे। किन्तु इस सम्मेलन में विकसित तथा विकासशील देशों के मध्य स्पष्टां मतभेद उभरे। औद्योगिक देशों ने पिछले अनेक वर्षों में प्राकृतिक संसाधनों का अपने हित में खूब दोहन किया है। विकासशील देशों की मांग है कि पर्यावरण सुरक्षा के लिए विकसित देश उ<हें तकनीकि तथा वित्तिय सहायता प्रदान करें क्योंकि पर्यावरण की बिगडी हालत के लिए मुख्यत: वे ही जिम्मेदार है|

रियों सम्मेलन की सफलता या असफलता के बारे में अलग-अलग लोगों के अलग-अलग विचार हैं। परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि पहली बार संसार के इतने शीर्षस्थ नेताओं ने बिगडते हुए पर्यावरण एवं पृथ्वी के भविष्य के सवाल पर एक जगह एकत्र होकर चिंता प्रकट की। उनकी चिंता इस बात का संकेत है कि देर से सही पर इस दिशा में शुरूआत तो हुई।

सतत विकास पर जोहान्सबर्ग सम्मेलन

रियों शिखर सम्मेलन के दस वर्ष बाद सतत विकास का आकलन करने के लिए संयुक्त राष्टां्र ने 2002 में जोहान्सबर्ग में विश्व सतत विकास शिखर सम्मेलन का आयोजन किया। सम्मेलन में एक बार फिर सतत विकास को अंतराष्ट्रीय क्रार्यक्रम का केद्रीय लक्ष्य माना गया तथा इसको लागू करने के

लिए आवश्यक उपायों पर जोर दिया गया।

इसमें आर्थिक-सामाजिक विकास तथा प्राकृतिक संसाधनों के बीच संतुलन के पक्षों को स्पष्ट किया गया। सतत विकास प्राप्ति के लिए कार्यक्रमों को विकसित करने तथा सामुदायिक सहयोग की प्राप्ति हेतु सम्मेलन में 2 मुख्य दस्तोवेजों को रखा गया -- सतत विकास पर जोहान्सबर्ग घोषणा तथा सतत विकास पर विश्व क्रियान्वयन योजना।

जोहान्सबर्ग घोषणा के मुख्य पहलु निम्न हैं:

> इसमें रियो सम्मेलन के पर्यावरण तथा विकास पर ऐजेडा - 21 को लागू करने के लिए प्रतिबद्घता दिखाई गई

> सतत विकास की प्राप्ति के लिए गरीबी, भूख, कुपोषण, सैनिक संघर्ष आदि बुराइयों पर काबु पाने की वचनबद्घता दर्शायी गयी।

> प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में स्थानीय लोगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका को दर्शाया गया।

> सतत विकास की प्राप्ति के लिए सरकार के साथ-साथ गैर-सरकारी संगठनों, नागरिक समाज तथा आम व्यक्ति की भूमिका को महत्त्व दिया गया।

जोहान्सबर्ग क्रियान्वयन योजना में सतत विकास की प्राप्ति के लिए निम्न पैमानों को रखा गया:

> सुशासन की स्थापना,

> गरीबी तथा अभाव से मुक्ति,

> विश्व शांति, सुरक्षा, स्थायिट्टव तथा मूल स्वंतत्रताओं और मानव अधिकारों के प्रति सम्मान,

> सतत विकास की प्राप्ति के लिए नैतिक मूल्यों पर जोर,

> उपभोग तथा उट्टपादन के गैर-सतत तरिकों को बदलना

जोहान्सबर्ग घोषणा में सभी प्रतिनिधियों ने सतत विकास की नीति पर अपना विश्वास जताया। सभी ने यह प्रण लिया कि वे एक मानवीय, समान व सुरक्षित विश्व समुदाय का निर्माण करेंगे जिसमें मानव की गरिमा की रक्षा की जाएगी। अत: राष्ट्रों की यह सामुहिक जिम्मेदारी बन जाती है कि वे अतर्राष्ट्रीय सहभागिता के द्वारा सतत विकास की प्राप्ति में अपना यो,दान करें ताकि पर्यावरण को वर्तमान के साथ-साथ भावी पिढियों के लिए भी सुरक्षित रखा जा सके।

लोबल वार्मिंग पर क्योटो सम्मेलन, 1997

वैश्विक तापमान में बढोतरी की चुनौती से निपटने के लिए संयुक्त राष्ट्र की पहल पर वर्ष 1992 में फ्रेमवर्क कवेंशन ऑन क्लाइमेट चैंज (UNFCC) का गठन किया गया था। विकसित देशों द्वारा ,लोबल वार्मिंग हेतु जिम्मेदार खतरनाक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती की बाध्यता के लिए

UNFCC द्वारा एक अंतराष्ट्रीय समझौता तैयार करने हेतु वार्ता शुरू की गई। 11 दिसंबर, 1997 को जापान के क्योटो शहर में यूएन एफसीसीसी के तीसरे सम्मेलन में क्योटो प्रोटोकॉल को स्वीकार किया गया जिस पर 55 देशों ने हस्ताक्षर किए हैं।

आस्ट्रेलिया समेत कई देशों ने इससे इंकार कर दिया, बाद में रूस द्वारा इसका समर्थन करने के कारण 16 फरवरी, 2005 को यह प्रोटाकॉल आस्तितट्व में आ गया। **इस प्रोटोकॉल के तहत दुनिया के विकसित देशों को वर्ष 2008 - 2012 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को घटाकर वर्ष 1995 के स्तर से 5 प्रतिशत नीचे लाने का प्रावधान किया गया है।** चीन तथा भारत समेत विकासशील देशों को इस संधि के दायरे से बाहर रखा गया है।

विकासशील देशों को मानना है कि उनकी आर्थिक परिस्थितियाँ उनहें क्योटों प्रोटोकॉल के प्रति वचनबद्घता की इजाजत नहीं देती। इसलिए इन देशों ने कुछ समय के लिए छूट माँगी। इसका एक कारण यह भी है कि इन देशों का प्रदूषित गैसों में प्रति व्यक्ति उट्टसर्जन विकसीत देशों की तुलना में बहुत कम है।

जलवायु परिवर्तन पर बाली सम्मेलन

संयुक्त राष्ट्र के नेतृत्व में इंडोनेशिया के बाली द्वीप में 3-14 दिसंबर, 2007 को जलवायु परिवर्तन पर एक सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में भारत के विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्री कपिल सिबबल के नेतृट्टव में

प्रतिनिधियों समेत विश्व में 190 देशों के 10 हजार से अधिक प्रतिनिधियों, वैज्ञानिकों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं ने हिस्सा लिया। इस सम्मेलन में वायुमंडलीय तापमान में बढोतरी के कारण आर्थिक एवं पर्यावरणीय विनाश की आशंकाओं से निपटने तथा ग्रीनहाउस गैसों के उट्टसर्जन की कटौती के मुद्दे पर गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श किया गया तथा वैश्विक तापवृद्घि से निपटने के लिए वर्ष 2009 तक की समय सीमा तय की गई। बाली सम्मेलन के मुख्य पहलु निम्न हैं:

* सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन की समस्या के निदान हेतु एक 'रोडमैप' पर सहमति जताई गई। इस रोडमैप के आधार पर , एक नया समझौता तैयार किया जायेगा जो वर्ष 1997 के क्योटो प्रोटाकॉल की जगह लागू किया जायेगा। इस नई संधि में यह भी कहा गया कि वर्ष 2013 से हानिकारक गसों के उत्सर्जन पर रोक लगाने के लिए सभी देशों को शामिल किया जायेगा।

* विकासशील देशों द्वारा ऊर्जा खपत कम करने के लिए तथा उन्नत तकनीक का इस्तेमाल करने के लिए विकसित देशें से तकनीक के साथ बौद्घिक संपदा अधिकार की भी मांग की गई।

विश्व में सबसे अधिक कार्बन डाय-ऑक्साइड उट्टसर्जित करने वाले देश अमेरिका ने रोडमैप को स्वीकार किया परंतु समझौते के प्रारूप को खारिज कर दिया। इस सम्मेलन में भारत ने किसी भी प्रकार का कमिटमेंट देने से मना किया तथा ग्रीन हाउस गैसों के उट्टसर्जन में कमी करने हेतु एक-लक्ष्य निर्धारित करने पर जोर दिया।

इस सम्मेलन का तात्कालिक लक्ष्य वायुमंडलीय तापमान में वृद्घि पर क्योटो प्रोटोकॉल को समाप्त कर एक समझौता करने हेतु वार्ता करना था। क्योकि क्योटो प्रोटोकॉल का कार्यकाल वर्ष 2012 में समाप्त हो जायेगा।

कोपेनहेगेन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन 2009

7-8 दिसंबर, 2009 तक जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र का सम्मेलन डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगेन के बेला सेंटर में हुआ। क्योटो प्रोटोकॉल के बाद जलवायु परिवर्तन पर होने वाला ये पांचवां सम्मेलन था । बेला सेंटर में ही उसी साल मई में इस सम्मेलन के विषय की भूमिका तैयार हो गई थी, जिसमें जलवायु परिवर्तन के बारे में वैश्विक जोखिम और चुनौतियों पर चर्चा होनी थी। इस सम्मेलन में इन चुनौतियों से निपटने के लिए बाली और पोंजन में तैयार की गई रणनीति के आधार पर काम करना तय किया गया और क्योटो प्रोटोकॉल के सहमति-पत्र की नया रूप दिया गया।

सहमति:

कोपेनहेगेन में अमरीका, भारत, चीन, ब्राजील और दक्षिण अफ्रीका द्वारा तैयार किए गये सहमति-पत्र में सभी देशों से अपील की गई कि, जनवरी 2010 के अंत तक अपने कार्बन कटौती में लक्ष्य की घोषणा करें। हालांकि इस सहमति-पत्र को 19 दिसंबर को सभी प्रतिनिधि देशों के सामने रखा गया लेकिन इसे सर्वसम्मति से स्वीकार नहीं किया जा सका।

सहमति-पत्र में इस बात की जरूरत पर बल दिया गया कि, तापमान में

बढ़ोत्तरी को 2°C से नीचे रखा जाय, लेकिन इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई कानूनी बाध्यता तय नहीं की गई। सहमति-पत्र के एक हिस्से में विकासशील देशों को अगले तीन सालों में तीन करोड़ अमरीकी डॉलर की आर्थिक सहायता देने की बात की गई थी, ताकि ये देश जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए तकनीकी रणनीति बना सकें।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, COP 21 या CMP 11--पेरिस

2015 संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, COP 21 या CMP 11 पेरिस, फ्रांस, 30 नवंबर से 12 दिसंबर 2015.को आयोजित किया गया था। यह जलवायु परिवर्तन पर 1992 के संयुक्त राष्ट्र संरचना सम्मेलन (यूएनएफसीसीसी) के लिए दलों की बैठक का 21 वां वार्षिक सत्र था और 1997 के क्योटो प्रोटोकॉल के लिए दलों की बैठक का 11वां सत्र था। यही नही विश्व पर्यावरण दिवस के मौके पर 22 अप्रैल 2016 को इस समझौते पर 175 देशों द्वारा हस्ताक्षर भी कर दिया गया है|

इस सम्मेलन की एक महत्वपूर्ण बात यह भी रही कि सम्मेलन से पहले ही 146 राष्ट्रीय जलवायु पैनलों ने सार्वजनिक रूप से राष्ट्रीय जलवायु योगदान मसौदे (INDCs, तथाकथित राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान) प्रस्तुत किये। इसलिए यह नया समझौता सभी पक्षों के स्व-निर्धारित राष्ट्रीय योगदान से ही 'ठोस आकार' ले पाया है।

लंबी कवायद के बाद अस्तित्व में आया यह समझौता क्योटो प्रोटोकॉल से

बिल्कुल भिन्न है। दरअसल, इस समझौते में जलवायु परिवर्तन को नियंत्रण में रखने के लिए अब विकसित देशों के साथ-साथ विकासशील देशों द्वारा भी राष्ट्रीय संकल्प व्यक्त करना अनिवार्य कर दिया गया है और इसके साथ ही इसमें निहित नियमों के मुताबिक समस्त देशों द्वारा संबंधित कार्यकलापों की समीक्षा करवाना, पारदर्शिता सुनिश्चित करना एवं समग्र पर्याप्तता की सामूहिक अहमियत को ध्यान में रखना आवश्यक कर दिया गया है|

◆इस समझौते में सभी सदस्य देशों ने औसत वैश्विक तापमान को प्री इंडस्ट्रियल एरा से 2 डिग्री ऊपर तक रखने की सहमती जतायी गयी|तथा यह भी कहा गया कि सभी देशों को कोशिश करना है कि औसत वैश्विक तापमान को प्री इंडस्ट्रियल एरा से 1.5 डिग्री तक ही रखा जाये |

पेरिस समझौते की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं-

A. पेरिस समझौता विकासशील देशों की विकास की अनिवार्यताओं को स्वीकार करता है। यह समझौता विकास के लिए विकासशील देशों के विकास के अधिकारों तथा पर्यावरण के साथ विकास को मान्यता देता है।

B. पेरिस समझौता स्थायी जीवनशैली और विकसित देशों के साथ खपत के साथ सतत प्रणाली के महत्व को पहचानता है और अपनी प्रस्तावना में 'जलवायु न्याय' की महत्ता को मानता है।

C. यह समझौता सम्मेलन के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करता है लेकिन अलग-अलग जिम्मेदारियों और क्षमता के सिद्धांतों को दर्शाता है।

D. इस समझौते का उद्देश्य यह सुनिश्चित करता है कि यह समन केन्द्रित नहीं है और इसमें अन्य महत्वपूर्ण तत्व जैसे अनुकूलनता, नुकसान और क्षति, वित्त, प्रौद्योगिकी, क्षमता निर्माण और पारदर्शिता तथा सहयोग शामिल है।

E. 2020 से पूर्व कार्रवाई भी निर्णय का एक हिस्सा है। विकसित देश वाले पक्षों ने एक परे रोडमैप के साथ अपनी वित्तीय सहायता के स्तर को बढ़ाने की गुजारिश की है, ताकि उन्हें 2020 तक सभा और अनुकूलन के लिए लगातार बढ़ रहे अनुकूलन वित्त द्वारा मौजूदा स्तर को बढ़ाने के लिए 100 बिलियन अमेरिकी डॉलर संयुक्त रूप से जुटाने का लक्ष्य हासिल किया जा सके।

पेरिस पर वैश्विक नजरिया:-

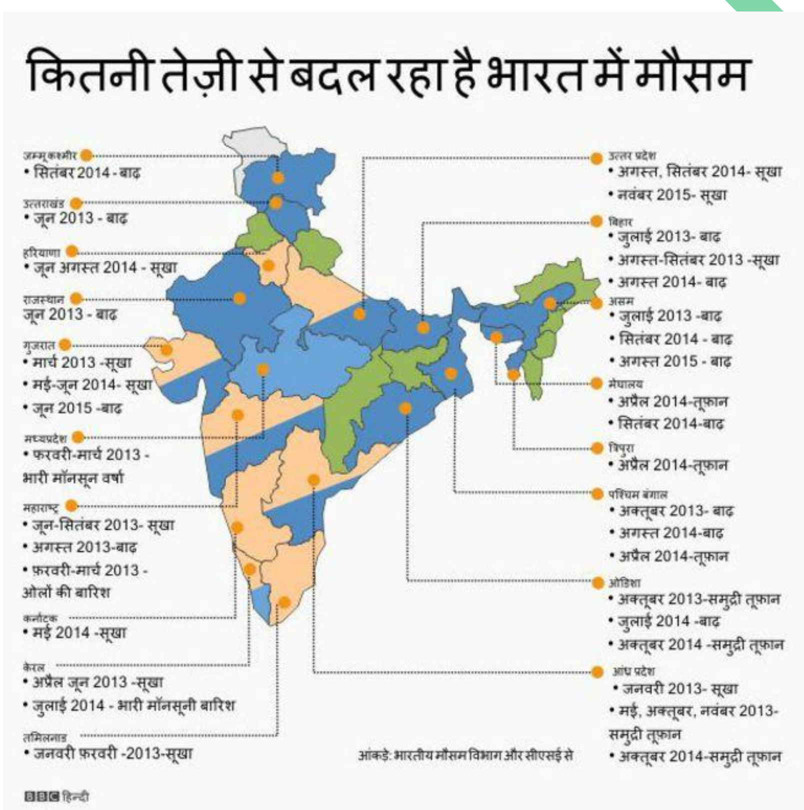
हाल ही में अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प द्वारा पेरिस जलवायु समझौते से अलग होने की बात की गई| इस सन्दर्भ में ट्रम्प प्रशासन का कहना है कि पेरिस समझौते से अमेरिका को एक समय बाद 53 खरब डॉलर का नुकसान होगा और इससे बिजली की कीमतें आसमान छूने लगेंगी।जिसका की अमेरिका सहित विश्व के अनेक देशों द्वारा विरोध किया गया|

> अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प के इस बयान से ट्विश्व में जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से बचाव के लिए विभिन्न देशों के बीच हुए पेरिस समझौते का रुख बदल सकता है।एवं इस सन्दर्भ में अन्य देशों पर पेरिस समझौते को लागु के लिए दबाव में कमी आएगी जिससे जलवायु परिवर्तन के खिलाफ

जंग निश्चित रूप से कमजोर होगी|

यूरोपीय संघ इसे मंजूरी देने के संकेत दे चुका है. दुनिया के दुसरे सबसे बड़े ग्रीन हाउस गैस चीन पहले ही इस करार को अपनी मंजूरी दे चुके हैं. पेरिस समझौते के लक्ष्य को पाने के लिए सामाजिक और आर्थिक ढांचे में काफी बड़ा परिवर्तन करना पड़ेगा, लेकिन जापान में अभी इस संदर्भ में कोई गंभीर चर्चा होती हुई नहीं दिख रही.

जलवायु परिवर्तन और भारत



जलवायु परिवर्तन जैसे मुद्दों पर हमेशा से ही भारत अपने भूमिका को बढ़ चढ़ कर निभाया है इस सन्दर्भ चाहे वो वैश्विक संधियाँ हो या फिर राष्ट्रीय नीतियाँ सबमे एक तारतम्यता दिखाई देती है इसी सन्दर्भ में भारत 30 जून

2008 को नई दिल्ली में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्ययोजना का शुभारम्भ किया। राष्ट्रीय कार्ययोजना में "निर्वाह योग्य विकास" (Sustainable Development) के भारत के दृष्टिकोण और उन कदमों को शामिल किया गया है जो इसे प्रभावपूर्ण ढंग से क्रियान्वित करने के लिए उठाने चाहिए।

जलवायु परिवर्तन और राष्ट्रीय मिशन

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) को औपचारिक रूप से 30 जून 2008 को लागू किया गया। राष्ट्रीय कार्य योजना के कोर के रूप में आठ राष्ट्रीय मिशन हैं। वे जलवायु परिवर्तन, अनुकूलन तथा न्यूनीकरण, ऊर्जा दक्षता एवं प्रकृतिक संसाधन संरक्षण की समझ को बढावा देने पर केंद्रित हैं।

आठ मिशन हैं:

> राष्ट्रीय सौर मिशन

> विकसित ऊर्जा दक्षता के लिए राष्ट्रीय मिशन

> सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन

> राष्ट्रीय जल मिशन

> सुस्थिर हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय मिशन

> हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन

> सुस्थिर कृषि हेतु राष्ट्रीय मिशन

> जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक ज्ञान पर राष्ट्रीय मिशन

राष्ट्रीय सौर मिशन

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय सौर मिशन को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना गया है। इस मिशन का उद्देश्य देश में कुल ऊर्जा उत्पादन में सौर ऊर्जा के अंश के साथ अन्य नवीकरणीय साधनों की संभावना को भी बढ़ाना है। यह मिशन शोध एवं विकास कार्यक्रम को आरंभ करने की भी माँग करता है जो अंतरराष्ट्रीय सहयोग को साथ लेकर अधिक लागत-प्रभावी, सुस्थिर एवं सुविधाजनक सौर ऊर्जा तंत्रों की संभावना की तलाश करता है।

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना ने वर्ष 2017 तक एकीकृत साधनों से 1000 मेगावाट/वर्ष फोटोवोल्टेइक उत्पादन का लक्ष्य रखा है। साथ ही, 1000 मेगावाट की संकेंद्रित सौर ऊर्जा उत्पादन क्षमता प्राप्त करने का भी लक्ष्य है।

संवर्धित ऊर्जा दक्षता के लिए राष्ट्रीय मिशन

भारत सरकार ने ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देने हेतु पहले से ही कई उपायों को अपनाया है। इनके अतिरिक्त जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य-योजना के उद्देश्यों में शामिल हैं:

बड़े पैमाने पर उर्जा का उपभोग करने वाले उद्योगों में ऊर्जा कटौती की मितव्ययिता को वैधानिक बनाना एवं बाजार आधारित संरचना के साथ अधिक ऊर्जा की बचत को प्रमाणित करने हेतु एक ढाँचा तैयार करना ताकि इस बचत से व्यावसायिक लाभ लिया जा सके।

कुछ क्षेत्रों में ऊर्जा-दक्ष उपकरणों/उत्पादों को वहनयोग्य बनाने हेतु नवीन उपायों को अपनाना।

ऊर्जा दक्षता बढ़ाने हेतु ऊर्जा-दक्ष प्रमाणित उपकरणों पर विभेदीकृत करारोपण सहित करों में छूट जैसे वित्तीय उपायों को विकसित करना।

सुस्थिर निवास पर राष्ट्रीय मिशन

इस मिशन का लक्ष्य निवास को अधिक सुस्थिर बनाना है। इसके लिए तीन सूत्री अभिगम पर जोर दिया गया है:

> आवासीय एवं व्यावसायिक क्षेत्रकों के भवनों में ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देना।

> शहरी ठोस अपशिष्ट पदार्थों का प्रबंधन,

> शहरी सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देना।

राष्ट्रीय जल मिशन

राष्ट्रीय जल मिशन   का लक्ष्य जल संरक्षण, जल की बर्बादी कम करना तथा एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन के द्वारा जल का अधिक न्यायोचित वितरण करना है। राष्ट्रीय जल मिशन, जल के उपयोग में 20% तक दक्षता बढ़ाने

हेतु एक ढाँचा का निर्माण करेगा। यह वर्षाजल एवं नदी प्रवाह की विषमता से निबटने हेतु सतही एवं भूगर्भीय जल के भंडारण, वर्षाजल संचयन तथा स्प्रिंकलर अथवा ड्रिप सिंचाई जैसी अधिक दक्ष सिंचाई व्यवस्था की सिफारिश करता है।

सुस्थिर हिमालयी पारिस्थितिक तंत्र हेतु राष्ट्रीय मिशन

इस कार्यक्रम में शामिल है- स्थानीय समुदाय, विशेषकर पंचायतों का पारिस्थितिक संसाधनों के प्रबंधन हेतु सशक्तीकरण करना। यह राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 में वर्णित निम्नलिखित उपायों की पुष्टि करता है:

पर्वतीय पारिस्थिकीतंत्र के सुस्थिर विकास हेतु भूमि उपयोग की उचित योजना एवं जल-छाजन प्रबंधन नीति को अपनाना

संवेदनशील पारिस्थिकी तंत्र को नुकसान से बचाने एवं भू-दृश्यों के संरक्षण हेतु आधारभूत संरचना के निर्माण की सर्वोत्तम नीति अपनाना

जैव कृषि को बढ़ावा देकर फसलों की पारंपरिक किस्मों की खेती एवं बागवानी को प्रोत्साहित करना ताकि किसान मूल्य प्रीमियम का लाभ प्राप्त कर सकें

स्थानीय समुदायों को आजीविका के बेहतर साधन उपलब्ध हो सकें इस हेतु सुस्थिर पर्यटन को बढ़ावा देने हेतु उचित नीतियों का निर्माण एवं बहुल-भागीदारी को सुनिश्चित करना

पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यटकों के आवागमन को नियंत्रित करने के उपायों पर बल

देना ताकि पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र की वहन क्षमता प्रभावित न हों

हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन

इस मिशन का लक्ष्य कार्बन सिंक जैसे पारिस्थितिकीय सेवाओं को बढ़ावा देना। यह 60 लाख हेक्टेयर भूमि में वनरोपण के लिए प्रधानमंत्री का हरित भारत अभियान का हिस्सा है ताकि देश में वन आवरण को 23% से बढ़ाकर 33% करना है। इसका कार्यान्वयन राज्यों के वन विभाग द्वारा संयुक्त वन प्रबंधन समितियों के माध्यम से ऊसर वन भूमि पर किया जाना है। ये समितियाँ समुदायों द्वारा सीधी कार्यवाही को प्रोत्साहित करेंगी।

सुस्थिर कृषि पर राष्ट्रीय मिशन

इसका लक्ष्य फसलों की नई किस्म, खासकर जो तापमान वृद्धि सहन कर सकें, उसकी पहचान कर तथा वैकल्पिक फसल स्वरूप द्वारा भारतीय कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक लचीला बनाना है। इसे किसानों के पारंपरिक ज्ञान तथा व्यावहारिक विधियों, सूचना प्रौद्योगिकी एवं जैव तकनीकी के साथ-साथ नवीन ऋण तथा बीमा व्यवस्था द्वारा समर्थित किया जाना है।

जलवायु परिवर्तन हेतु रणनीतिक ज्ञान पर राष्ट्रीय मिशन

यह मिशन, शोध तथा तकनीकी विकास के विभिन्न क्रियाविधियों द्वारा सहभागिता हेतु वैश्विक समुदाय के साथ कार्य करने पर बल देता है। इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन से संबंधित समर्पित संस्थानों एवं

विश्वविद्यालयों के नेटवर्क तथा जलवायु-शोध कोष द्वारा समर्थित इसके स्वयं का शोध एजेंडा होगा। यह मिशन, अनुकूलन तथा न्यूनीकरण हेतु नवीन तकनीकियों के विकास के लिए निजी क्षेत्र के उपक्रमों को भी प्रोत्साहित करेगा।

"पेरिस जलवायु समझौता और भारत



2 अक्टूबर 2016 भारत ने जलवायु परिवर्तन पर पेरिस जलवायु समझौते को मंजूरी की पुष्टि कर दी है एवं 4 नवम्बर 2016 से यह् समझौता प्रभावी हो गया है| अतः अब जहा एक ओर गरीबी अशिक्षा एवं लोगो के लिए बेहतर स्वस्थ्य के लिए अपने आर्थिक वृद्धि दर को बनाये रखने की चुनौती होगी तो वोही दूसरी ओर वैश्विक समुदाय से किए गए वादे को भी निभाने का दबाव भी होगा

>इस समझौते के मुताबिक,भारत,वर्ष 2015 के अपने कार्बन उत्सर्जन की तुलना में 2030 तक 30 से 35 प्रतिशत कटौती करेगा|इस प्रकार इस लक्ष्य को पाने के लिए साल 2030 तक अपनी कुल बिजली क्षमता का 40 फीसदी हिस्सा गैर जीवाश्म ईंधन के स्रोतों से सुनिश्चित करना होगा, जो वर्तमान से 30 फीसदी अधिक है।

गौर करने की बात यह भी है कि एक वैश्विक निगरानी तंत्र बराबर निगाह रखेगा कि भारत कितना कार्बन उत्सर्जन कर रहा है|निगरानी,समीक्षा तथा मूल्याङ्कन -ये कार्य अन्तराष्ट्रीय समिति के द्वारा की जाएगी| शुरुआत 2018 से की जाएगी |

भारत के लिए चुनौतियां

◆इंडिया स्पेंड की मार्च 2016 की एक रिपोर्ट के मुताबिक,चुकी देश में शहरीकरण लगातार बढ़ रही है अतः शहरी इलाकों में जंगलों की कटाई की संभावना है, जिसके कारण भारत के कई शहरों में पेड़ अपनी भूमि की तुलना में पांच फीसदी तक कम हो जाएगी।

◆यूनियन ऑफ कंसन्ड साइंटिस्ट्स के मुताबिक, जब पेड़ों की कटाई होगी, तो वे संग्रहित कार्बन डाई ऑक्साइड को छोड़ेंगे। वनों की कटाई से करीब तीन अरब टन कार्बन डाई ऑक्साइड निकलेंगे।

◆इंडिया स्पेंड की मई 2015 की एक रिपोर्ट के मुताबिक, जैसे-जैसे भारत विकास करेगा कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन में वृद्धि होगी।

भारत के लिए संभावनायें

◆भारत में जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए वर्ष 2008 में एक राष्ट्रीय कार्य योजना पेश की थी अक्षय ऊर्जा,ऊर्जा दक्षता,कचरे का बेहतर निस्तारण,पानी का कुशलतम उपयोग,हिमालय संरक्षण,हरित भारत,टिकाऊ कृषि व पर्यावरण ज्ञान तंत्र का विकास-इसके आठ लक्ष्य क्षेत्र थे|भारत को इस लक्ष्य को पाने की पुरजोर कोशिश करनी होगी|

◆यही नही इस कवायतों के बदले भारत को "ग्रीन क्लाइमेट फण्ड" नमक विशेष फण्ड से मदद मिलेगी|यद्यपि कि यह मदद बढ़,सुखा,आदि जैसे

प्राकृतिक आपदाओं के एवज में नहीं मिलेंगे बल्कि भारतियों के रहन सहन और रोजी-रोटी तथा तौर -तरीकों में बदलाव के लिए मिलेंगे | फिर भी इससे देश को अपने टिकाऊ विकास के रस्ते पर चलने में अवश्य मदद मिलेगी|

◆बिजली के उत्पादन के लिए जीवाश्म से गैर जीवाश्म की ओर बढ़ना बेहद महंगा होगा और इसके लिए फंडिंग तथा प्रौद्योगिकी के लिए विकसित देशों के साथ मिलकर काम किया जाएगा।

◆अगर वैश्विक हालात में बदलाव होता है और अन्य देश अपनी प्रतिबद्धता पूरी नहीं कर पाते हैं, तो भारत अपने रुख की समीक्षा कर सकता है।

निष्कर्ष

संयुक्त राष्ट्र संघ तथा इसकी एजेंसियों के लिए पर्यावरण की सुरक्षा एक मुख्य चिंता का विषय बन गया है। इस संदर्भ में उत्तर-दक्षिण विभाजन एक बडी चुनौति है। विषय की गंभीरता को देखते हुए आज आवश्यकता है कि विकसीत देश इस दिशा में एक सार्थक भूमिका निभायें। पर्यावरणीय संकट से निपटने में संयुक्त राष्ट्र संघ ने अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को एक मजबूत नेतृट्टव प्रदान किया है। यह उसके प्रयासों का ही फल है कि आज सभी देश समस्या के समाधान के लिए एक मंच पर आये हैं। ,अतः यह जरुरी है कि लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत का हस तथा जैव-विविधता संकट के समाधान पर सभी देश एकजुट होकर संयुक्त राष्ट्र संघ के नेतृत्तव में पर्यावरण संकट से मानव जाति के अस्तिट्टव को बचाने में एक सार्थक प्रयास में योगदान दें।